International Journal of Research
Special Issue for UGC Approved Journal-Hindi Papers
Available at https://edupediapublications.org/journals
e-ISSN: 2348-6848
p-ISSN: 2348-795X
Volume 05 Issue 02
January 2018

प्राचीन भारत में नियोग की प्रासंगिकता :– एक अध्ययन

उमेश कुमार
इतिहास प्राध्यापक
रा0व0मा0वि0 जसराना सोनीपत

शोध सार : भारतीय समाज में वंश को आगे बढाने को महत्वपूर्ण माना जाता रहा है और पुत्र प्राप्ति को इसके लिए आवश्यक माना जाता है । इसी कारण जब पत्नीविहीन अर्थात् पति की मृत्यु या उसके नपुंसक या रोगग्रस्त होने की स्थिति में वंश चलाने के लिए पति के भाई, परिवार या गोत्र के व्यक्ति के साथ स्त्री का विशेष संबंध बनाया जाता है तो उस प्रक्रिया को नियोग के नाम से जाना जाता है ।

मुख्य शब्द– शिक्षा, नियोग, धर्म, अभिलाषा, परम्परागत, भारतीय विद्या ।

भूमिका : नियोग की प्रथा के अनुसार विधवा स्त्री निःसन्तान होने पर पुत्र प्राप्ति की इच्छा से अपने देवर के साथ संबंध स्थापित कर सकती है, देवर के न होने पर विधवा स्त्री सपिण्ड, सगोत्र, सप्रवर एवं सजातीय पुरूष के साथ भी नियोग स्थापित कर सकती है । इसके लिए उसे गुरूजनों से आज्ञा लेनी चाहिए और सम्भोग केवल ऋतुकाल में (प्रथम चार दिनों को छोडकर) ही करना चाहिए [1]। गौतम का कहना है कि जीवित पति द्वारा प्रार्थित स्त्री जब नियोग से पुत्र उत्पन्न करती है तो वह उसी पुरूष का होता है । गौतम ऐसे पुत्र को क्षेत्रज और उसकी माता को क्षेत्र की संज्ञा देते हैं । इसी प्रकार उस स्त्री या विधवा का पति क्षेत्री या क्षेत्रिक (जिसकी वह पत्नी या विधवा होती है) तथा पुत्रोत्पति के लिए नियुक्त पुरूष नियोगी कहलाता है [2]।

वशिष्ठधर्मसूत्र [3] के अनुसार विधवा का पति या भाई गुरूओं को (जिन्होंने पढाया है या मृतात्मा के लिए यज्ञ कराया हो) तथा सम्बंधियों को एकत्र करे और उसे (विधवा को) मृत के लिए पुत्रोत्पत्ति के लिए नियोजित करे । जन्मादिनी विधवा अपने को न संभाल सकने वाली (दुःख के मारे) रोगी या बूढी विधवा को इस कार्य के लिए नियोजित नहीं करना चाहिए । युवावस्था के उपर 16 वर्ष तक ही नियोग होना चाहिए । बीमार पुरूष को इसके लिए नियुक्त नहीं करना चाहिए । नियुक्त पति को पति की भांति प्रजापति वाले मंगल मुहुर्त में विधवा के पास जाना चाहिए और उसके साथ न तो रतिक्रीडा करनी चाहिए न अश्लील भाषण करना

चाहिए और न ही दुर्व्यवहार करना चाहिए । धन सम्पत्ति की प्राप्ति की अभिलाषा से नियोग नहीं करना चाहिए । बौधायन धर्मसूत्र[4] के अनुसार क्षेत्रज पुत्र वही है जो निश्चित आज्ञा के साथ विधवा से या नपुंसक या रूगण पति की पत्नी से उत्पन्न किया जाए । मनु [5] का कथन है कि पुत्रहीन विधवा अपने देवर या सपिण्ड से पुत्र उत्पन्न कर सकती है । नियुक्त पुरूष को अंधेरे में ही विधवा के पास जाना चाहिए, उसके शरीर पर धृत का लेप होना चाहिए और उसे एक ही (दो नहीं) पुत्र उत्पन्न करना चाहिए किन्तु कुछ लोगों के मत से दो पुत्र उत्पन्न करने चाहिएं । इसका पता हमें बौधायनधर्मसूत्र[6] याज्ञवल्क्य[7] एवं नारद[8] से भी चलता है । कोटिल्य[9] ने लिखा है कि बूढे एवं न अच्छे किए जाने वाले रोग से पीडित राजा को चाहिए कि वह अपनी रानी को नियुक्त कर किसी मातृबंधु या अपने ही समान गुणवाली सामन्त द्वारा पुत्र उत्पन्न कराए । एक अन्य स्थल पर कोटिल्य ने पुनः कहा है कि कोई ब्राहमण बिना सन्निकट उत्तराधिकारी के मर जाए तो किसी सगोत्र या मातृबंधु को नियोजित कर क्षेत्रज पुत्र उत्पन्न करना चाहिए [10]।

नियोग की दशा :–

इतिहासकार काठो[11] के अनुसार नियोग की निम्नलिखित दशाएं हैं – (1) नियोग के लिए जीवित या मृत पति पुत्रहीन होना चाहिए । (2) कुल के गुरूजनों द्वारा ही निर्णीत पद्धति से पति के लिए पुत्र उत्पन्न करने के पत्नी को नियोजित करना चाहिए । (3) नियोजित पुरूष को पति का भाई देवर सपिण्ड या पति का सगोत्र गौतम के अनुसार सप्रदर या अपनी जाति का होना चाहिए । (4) नियोजित पुरूष एवं नियोजित विधवा में कामुकता का पूर्ण अभाव एवं कर्त्तव्य ज्ञान का भार रहना चाहिए । (5) नियोजित पुरूष के शरीर पर धृत या तेल का लेप चाहिए, उसे न तो बोलना चाहिए, न चुम्बन करना चाहिए और न ही स्त्री के साथ किसी प्रकार की रतिक्रीडा में संयुक्त होना चाहिए । (6) यह संबंध केवल एक पुत्र उत्पन्न होने तक अन्य मतों से दो पुत्र उत्पन्न होने तक) रहता है । (7) नियुक्त विधवा को अपेक्षाकृत युवा होना चाहिए, उसे बूढी या बन्ध्या बांझ, अतीत प्रजनन शक्ति, बीमार, इच्छाहीन या गर्भवती नहीं होना चाहिए एवं (8) एक पुत्र की उत्पत्ति के उपरान्त दोनों को एक दूसरे से अर्थात् नियुक्त पुरूष की श्वसुर–सास एवं नियुक्त विधवा या स्त्री को वधू सा व्यवहार करना चाहिए [12]।

स्मृतियों में यह स्पष्ट आया है कि बिना गुरूजनों द्वारा नियुक्त या अन्य उपर्युक्त दशाओं के न रहने पर यदि देवर भाभी से सम्भोग करे तो वह बलात्कार का अपराधी माना जायेगा । इस प्रकार के सम्भोग से उत्पन्न पुत्र को जारज कुलटोत्पन्न) कहा जायेगा और वह सम्पत्ति का उत्तराधिकारी नहीं होगा और वह उत्पन्न करने वाले का पुत्र कहा जायेगा[13] ।

International Journal of Research
Special Issue for UGC Approved Journal-Hindi Papers
Available at https://edupediapublications.org/journals
e-ISSN: 2348-6848
p-ISSN: 2348-795X
Volume 05 Issue 02
January 2018

नारद के अनुसार यदि कोई विधवा या पुरूष नियोग के नियमों के प्रतिकूल जाए तो राजा द्वारा उन दोनों का दण्ड मिलना चाहिए नही तो अव्यवस्था उत्पन्न हो जाएगी[14] ।

मनु[15] ने नियोग वर्णन करने के उपरान्त इसकी आलोचना की है । मनु ने इसे नियमविरूद्ध एवं अनैतिक ठहराया है । उन्होंने राजा बेन को इसका प्रचालक माना है और इसे वर्ण संकरता का जनक मानकर इसकी निन्दा करते हैं लेकिन कुछ लोग अज्ञानवश इसे अपनाते हैं । मनु[16] ने नियोग का अर्थ यह कहकर समझाया है कि नियोग के विषय में नियम केवल उसी कन्या के लिए हैं जो वधुरूप में प्रतिश्रुत हो चुकी थी किन्तु भावी पति मर गया, ऐसी स्थिति में मृत पति भाई को उस कन्या से विवाह करके केवल ऋतुकाल में एक बार सम्भोग केवल तब तक करना पडता था जब तक कि एक पुत्र उत्पन्न न हो जाए और वह पुत्र मृत पति का पुत्र माना जाता था । यद्यपि मनु ने नियोग की प्राचीन प्रथा की निन्दा की है किन्तु उत्तराधिकार एवं रिक्श के विभाजन में क्षेत्रज पुत्र के लिए व्यवस्था रखी है [17]। बृहस्पति ने लिखा है –'मनु ने प्रथम नियोग का वर्णन करके इसे निषिद्ध किया है । इससे स्पष्ट होता है कि प्राचीनकाल में लोगों में तपोबल एवं ज्ञान था । अतः वे नियमों का पालन तभी कर सकते थे किन्तु द्वापर एवं कलियुग में लोगों में शक्ति एवं बल का हास हो गया है । अतः नियोग के नियमो का पालन करने में असमर्थ हैं [18]।

गौतम एवं वशिष्ठ के विष्णुधर्मसूत्रों [19] में एक बात नहीं पाई जाती कि 'क्षेत्रज वह पुरूष है जो नियुक्त पत्नी या विधवा तथा पति के सपिण्ड या ब्राहमण से उत्पन्न होता है ।' महाभारत में नियोग के कतिपय उदाहरण प्राप्त होते हैं । विचित्रवीर्य के निःसन्तान जाने पर उसकी रानियों ने व्यास से नियोग करके धृतराष्ट्र एवं पाण्डु को उत्पन्न किया था [20]। पाण्डु के अयोग्य होने पर कुन्ती एवं माद्री ने नियोग द्वारा पुत्र उत्पन्न किये थे । परशुराम ने जब अनेक क्षत्रियों का वध कर डाला था तब बहुत सी क्षत्रिय रानियां ब्राहमणों के यहां पुत्र उत्पन्न करने गई थी [21]। महाभारत के अनुसार नियोग से अधिक से अधिक तीन पुत्र उत्पन्न किये जा सकते थे ।[22]

नियोग के नियम :–

स्मृतियों मे नियोग संबंधी नियमों के विषय में बहुत से मत–मतान्तर हैं । अतः विश्वरूप, मेघातिथि जैसे टीकाकारों ने अपने मत प्रकाशन में पर्याप्त छूट रखी है । विश्वरूप ने याज्ञवल्क्य[23] की व्याख्या करते हुए इस विषय में कई मत प्रकाशित किये हैं :– (1). आज के युग में नियोग निकृष्ट है और स्मृति विरूद्ध है [24]। (2) यह उर्पयुक्त वर्णित मत मनु का ही है । (3). यह विकल्प से किया जाता है नियोग वर्जित एवं आज्ञापित दोनों है । (4). नियोग के विषय में स्मृतियों की उक्तियां शूद्रों के लिए हैं [25]। यह राजाओं के लिए आज्ञापि था जब

उतराधिकार के लिए कोई पुत्र नहीं होता था । विश्वरूप ने अपनी उक्तियां वृद्ध मनु एवं वायु की गाथा पर आधारित की है । विश्वरूप ने यह भी कहा है कि विचित्रवीर्य की रानियों से व्यास द्वारा उत्पन्न पुत्रों की बात द्रौपदी के पांच पतियों से विवाह की भांति निराधार है [26]।

नियोग से उत्पन्न पुत्र किसका है ? इस विषय में भी मतैक्य नहीं है । वशिष्ठधर्मसूत्र ने[27] स्पष्टन इस प्रकार के विभिन्न मतों की ओर संकेत किया है । (1). प्रथम मत के अनुसार पुत्र जनक का होता था, किन्तु इस मत से नियोग की उपयोगिता निरर्थक सिद्ध हो जाती है । निरूक्त[28] ने इस मत का समर्थन किया है और ऋग्वेद[29] को उदाहरण माना है । गौतम[30] और मनु[31] ने भी यही बात मानी है । आपस्तम्बधर्मसूत्र[32] का कहना है कि एक ब्राहमण ग्रन्थ के अनुसार पुत्र जनक का ही होता है । (2). द्वितीय मत यह था कि यदि विधवा के गुरूजनों एवं नियुक्त पुरूष में यह तय पाया हो कि पुत्र पति का होगा तो पुत्र पति का ही माना जायेगा । (3). तृतीय मत यह था पुत्र दोनों का अर्थात् जनक एवं विधवा के स्वामी का होता है । यह मत नारद[33] याज्ञवल्क्य[34] मनु[35] एवं गौतम[36] का है ।

पति के भाई से विधवा का विवाह तथा उससे पुत्रोत्पति एवं अति विस्तृत प्रथा रही है । ऋग्वेद[37] में हम पढते हैं –'तुम्हें हे आश्विनौ, यज्ञ करने वाला अपने घर में वैसे ही पुकार रहा है जिस प्रकार विधवा अपने देवर को पुकारती है ।' किन्तु इससे यह स्पष्ट नहीं हो पाता कि यह उक्ति विधवा तथा उसके देवर के विवाह की ओर या नियोग की ओर संकेत करती है । ऋग्वेद की एक ऋचा में देवर का आर्य द्वितीय वर लगाया गया है । मेघातिथि[38] ने इसकी व्याख्या नियोग के अर्थ में की है । सूत्रों एवं स्मृतियों के अनुसार नियोग एवं विवाह में अंतर है । बहुत से प्राचीन समाजों में स्त्रियां सम्पत्ति के समान वसीयत में प्राप्त होती थी । प्राचीनकाल में बडे भाई की मृत्यु पर छोटा भाई उसकी सम्पत्ति एवं विधवा पर अधिकार कर लेता था किन्तु ऋग्वेद का काल इस प्रथा से बहुत ऊपर उठ चुका था । मैकलेनान[39] के अनुसार नियोग की प्रथा के मूल में बहु–भर्तृकता पाई जाती है किन्तु वेस्टस्मार्क ने इस मत का खण्डन किया है जो ठीक ही है । जब सूत्रों में नियोग की प्रथा मान्य थी तब बहु–भर्तृकता या तो विस्मृत हो चुकी थी या वर्जित थी । वशिष्ठधर्मसूत्र[40] ने यह मत माना है और वैदिक उक्तियों के आधार पर पितृऋण से मुक्त होने के लिए पुत्रोत्पति को एवं स्वर्गिक लोकों की महता प्रकट की है । किसी भी ऋषि ने इसके पीछे आर्थिक कारण नहीं रखा है । यदि आर्थिक कारणों से गौण पुत्र प्राप्त किये जाएं तो एक व्यक्ति बहुत से पुत्र प्राप्त कर लेगा किन्तु धर्मशास्त्रकारों ने इसकी आज्ञा नहीं दी है । जिसे औरस पुत्र प्राप्त होता था वह वह क्षेत्रज या दत्तक पुत्र प्राप्त नहीं कर सकता था । अतः स्पष्ट है कि नियोग के पीछे आर्थिक कारण नहीं थे । विन्तरनित्स[41] ने नियोग के कारणों में दरिद्रता स्त्रियों का अभाव एवं संयुक्त परिवार माना है किन्तु इसक विषय में कि ऐतिहासिक काल में भारत में स्त्रियों का अभाव या

कोई प्रमाण प्राप्त नहीं होता है । यही कहना उचित जचता है कि नियोग अति प्राचीन प्रथा का अवशेष मात्र था जो क्रमशः विलीन होता हुआ ईसा की प्रारम्भिक शताब्दियों में सदा के लिए वर्जित हो गया ।

सन्दर्भ ग्रन्थ–

1. गौतम धर्मसूत्र, 18/4–14
2. गौतम धर्मसूत्र, 18/11
3. वशिष्ठधर्मसूत्र, 17/56–56
4. बौधायनधर्मसूत्र, 2/2/17
5. मनुस्मृति, 9/59–61
6. बौधायनधर्मसूत्र, 2/268–70
7. याज्ञवल्क्य स्मृति, 80–83
8. नारद स्मृति, स्त्रीपुस, 80–83
9. अर्थशास्त्र, 1/17
10. अर्थशास्त्र, 3/16
11. पी0बी0 काणे, धर्मशास्त्र का इतिहास, भाग–1, पृ0– 314
12. मनुस्मृति 9/62
13. वशिष्ठधर्मसूत्र, 17/63
14. नारदस्मृति, स्त्रीवपुस, 84–85
15. मनुस्मृति 9/64–68
16. मनुस्मृति 9/69–70
17. मनुस्मृति 9/120–121,145
18. बृहस्पति, याज्ञवल्क्यस्मृति की टीका पर अपरार्क द्वारा उद्धृत, 9/68–69
19. विष्णुधर्मसूत्र, 15/3
20. जयशंकरप्रसाद, प्राचीन भारत का सामाजिक इतिहास, पृ0– 366
21. महाभारत आदिपर्व, 1/64/5–8, 1/104/5–6
22. महाभारत आदिपर्व, 1/123/77
23. विश्वरूप याज्ञवल्क्यस्मृति पर टिका, 1269
24. मनुस्मृति, 9/64–68
25. मनुस्मृति, 9/64

e-ISSN: 2348-6848
p-ISSN: 2348-795X
Volume 05 Issue 02
January 2018

26. विश्वरूप याज्ञवल्क्य पर टिका, 1/69
27. वशिष्ठ धर्मसूत्र, 17/6
28. निरूक्त, 3/1–3
29. ऋग्वेद, 7/4/7–8
30. गौतम धर्मसूत्र, 18/9
31. मनुस्मृति, 9/181
32. आपस्तम्बधर्मसूत्र, 2/6/1325
33. नारदस्मृति, स्त्रीपुंस, 58
34. याज्ञवल्क्यस्मृति, 2/127
35. मनुस्मृति, 9253
36. गौतमधर्मसूत्र, 18/13
37. ऋग्वेद, 10/40/2
38. मेघातिथि, मनुस्मृति पर टिका, 9/66
39. ओमप्रकाश प्रसाद एवं प्रशान्त गौरव, प्राचीन भारत का सामाजिक एवं आर्थिक इतिहास पृ0– 128
40. वशिष्ठ धर्मसूत्र, 17/1–6
41. विन्तरानित्स, जे0आर0ए0एस0, 1897,पृ0– 758